International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 • Website: www.ijfmr.com • Email: editor@ijfmr.com

संरचनात्क–प्रकार्यात्मक दृष्टिकोण और महिला स्थिति

डॉ. मीनाक्षी मीना

सह आचार्य समाजशास्त्र राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ (अलवर)

सारांश

यह शोध–पत्र संरचनात्मक–प्रकार्यात्मक दृष्टिकोण के आधार पर समाज में महिलाओं की स्थिति का विश्लेषण करता है। इस दृष्टिकोण के अनुसार समाज एक संगठित तंत्र है, जिसमें प्रत्येक संस्था और भूमिका का एक विशेष कार्य (थ्नदबजपवद) होता है। महिलाओं की पारंपरिक भूमिकाओं को सामाजिक स्थिरता और संतुलन के लिए आवश्यक माना गया है। यह अध्ययन इस दृष्टिकोण की विशेषताओं, सीमाओं तथा आधुनिक संदर्भ में इसकी प्रासंगिकता का विश्लेषण करता है।

भारतीय समाज में जाति संरचना लाक्षणिक रुप से क्षैतिज वर्गों अथवा जाति–स्तरों से बनती है जिसके समाज में अपने ही प्रकार्य हैं। इनकी श्रेणीबद्धता का मूल आधार समाज की आवश्यकताओं के अनुसार निर्मित होता है। पारम्परिक रूप में भारतीय जाति व्यवस्था एक कठोर संस्तरणीय व्यवस्था रही है। जातियों की असमानताओं की इस संरचना में महिलाओं का क्या स्थान है? इसका अध्ययन आवश्यक है। जिस प्रकार ऊंची और नीची जातियों के संदर्भ सारी संरचनाओं से उभर जाते हैं और जिस प्रकार से आर्थिक संरचनाओं के आधार पर जातियों और वर्गों के बीच बहुत अधिक असमानता दिखाई नहीं देती, महिलाओं की प्रस्थितियां जाति आधारों पर असमानता की संरचना में कैसे देखी जा सकती है? यह विचार इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि निम्न जातियों के साथ महिलाओं को भी समाज में कमजोर वर्ग की तरह स्वीकारा जाता है। क्या जाति संरचना महिलाओं की प्रस्थिति के संदर्भ में, महिलाओं के लिए किसी विशिष्टता का निर्माण करती है? प्रस्तुत लेख इसी संदर्भ से जुड़ा है।

मुख्य शब्दः जाति संरचना, लैगिंक असमानता, स्तरीकरण, सशक्तीकरण, नारीवाद

प्रस्तावना (प्दजतवकनबजपवद)

समाजशास्त्र में संरचनात्मक–प्रकार्यात्मक दृष्टिकोण ै(जतनबजनतंस थ्नदबजपवदंसपेउ) समाज को एक जैविक तंत्र की तरह देखता है, जिसमें विभिन्न अंग मिलकर सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखते हैं। इस सिद्धांत को प्रमुख रूप से ज्ंसबवजज च्ंतेवदे और म्उपसम क्नतीमपउ ने विकसित किया।

इस दृष्टिकोण के अनुसार, समाज में महिलाओं और पुरुषों की भूमिकाएँ अलग–अलग लेकिन पूरक (ब्वउचसमउमदजंतल) होती हैं।

संरचनात्मक–प्रकार्यात्मक दृष्टिकोण की अवधारणा

इस दृष्टिकोण के मुख्य तत्व –

समाज एक संगठित प्रणाली है

प्रत्येक संस्था (परिवार, शिक्षा, धर्म) का एक कार्य होता है

सामाजिक स्थिरता और संतुलन बनाए रखना प्रमुख उद्देश्य है

महिला स्थिति का कार्यात्मक विश्लेषण

(क) परिवार में भूमिका

ज्ंसबवजज च्ंतेवदे के अनुसार– महिलाओं की भूमिका म्ग्चतमेपअम त्वसम (भावनात्मक) होती है पुरुषों की भूमिका प्देजतनउमदजंस त्वसम (आर्थिक) होती है

महिलाएँ : बच्चों का पालन–पोषण करती हैं, परिवार में भावनात्मक संतुलन बनाए रखती हैं

(ख) सामाजिक स्थिरता में योगदान

महिलाओं की पारंपरिक भूमिकाएँः सामाजिक मूल्यों का संचार, संस्कृति का संरक्षण, सामाजिक नियंत्रण में सहायता

(ग) श्रम विभाजन (क्पअपेपवद व ि स्ंइवत)

इस दृष्टिकोण में : कार्यों का विभाजन प्राकृतिक और आवश्यक माना गया है। इससे समाज में संतुलन और दक्षता बनी रहती है

महिला स्थिति का मूल्यांकन

सकारात्मक पक्ष – समाज में स्पष्ट भूमिका निर्धारण, परिवार की स्थिरता, सामाजिक समरसता

नकारात्मक पक्ष (आलोचना) – महिलाओं को सीमित भूमिकाओं में बाँधना, लैंगिक असमानता को उचित ठहराना, शक्ति और संसाधनों में असमान वितरण, नारीवादी विद्वानों ने इस दृष्टिकोण की आलोचना की है, क्योंकि यह महिलाओं की स्वतंत्रता और समानता को कम महत्व देता है।

आधुनिक संदर्भ में परिवर्तन –

महिलाओं की शिक्षा और रोजगार में वृद्धि, पारंपरिक भूमिकाओं में बदलाव ,लैंगिक समानता की ओर बढ़ता समाज, आज महिलाएँ : आर्थिक रूप से स्वतंत्र हैं, नेतृत्व और राजनीति में भागीदारी कर रही हैं।

वैकल्पिक दृष्टिकोण

नारीवादी दृष्टिकोण (थ्मउपदपेज च्मतेचमबजपअम) ⟶ असमानता को चुनौती देता है

संघर्ष सिद्धांत (ब्वदसिपबज जीमवतल) ⟶ शक्ति और संसाधनों के असमान वितरण पर जोर देता है

उद्देश्य :

1. भारतीय समाज में जातियों की असमानताओं की संरचना में महिलाओं की प्रस्थिति का मालुम करना।
2. महिलाओं का समाज में किस प्रकार का समाजीकरण होता है को मालुम करना।
3. क्या जाति संरचना महिलाओं की प्रस्थिति के संदर्भ में, महिलाओं के लिए किसी विशिष्टता का निर्माण करती है?

परिचय

समाजशास्त्र के इतिहास में बहुत समय तक स्तरीकरण के संदर्भो में महिला के संदर्भो को स्वीकार नहीं किया गया था। ओकले (1974:68) ने जेन्डर को स्त्रीत्व तथा पुरूषत्व का समानान्तर तथा सामाजिक असमानता का विभाजन माना था। ओकले का विचार था कि यौन का अभिप्राय जैविकीय लिंग के आधार पर स्त्री और पुरुषों का विभाजन है। जेन्डर समाज द्वारा संरचित स्त्री और पुरुषों के भेदभाव से संबंधित है। प्रारंभ में इस शब्द का प्रयोग व्यक्तिगत पहचान और व्यक्तित्व को दर्शाने के लिए किया गया था और बाद में इस शब्द का संबंध उन सांस्कृतिक संदर्भो के साथ जुड़ा जिसका संबंध स्त्रीत्व और पुरुषत्व की पारम्परिक चर्चा के स्थान पर श्रम विभाजन, संस्थाओं तथा संगठनों में संरचनात्मक स्तर को जानना था। सत्तर के दशक में समाजशास्त्रियों और मनोवैज्ञानिकों का ध्यान पुरुषों और महिलाओं के बीच भेद तथा अन्तरों की ओर गया। यह कहा गया है कि पुरुषों और महिलाओं के बीच अलग–अलग संस्कृतियों और समाजों में अलग–अलग व्यवस्थाएं हैं। प्रारंभ से ही महिलाओं और पुरुषों के बीच अन्तरों पर बहस भी हुई है। इस शब्द की उत्पत्ति से पहले सामान्यतः समाजशास्त्री पुरुष और महिला के बीच शारीरिक भिन्नताओं की बात करते थे। लेकिन इसके विपरीत जेन्डर शब्द मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अन्तरों का प्रतीक है। इसका संबंध समाज द्वारा रचित स्त्रीत्व तथा पुरुषत्व की रचना से है और साथ ही इसका संबंध प्रत्यक्ष ही व्यक्तिगत जैवकीय आधारों के साथ जुड़ा हुआ है। 'जेन्डर' शब्द का मूल अन्तर उसकी यौनिक व्याख्या से है जिसका अभिप्राय यह है

कि समाज में महिलाओं और पुरुषों की दो प्रकार की व्याख्याएं हैं – पहली व्याख्या का संबंध जीवशास्त्रीय अन्तरों से और दूसरी व्याख्या का संबंध उन मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक संरचनाओं से है जो किन्हीं अर्थों में दोनों की अलग–अलग प्रस्थिति का परिचायक है।

कतिपय गतिविधियां तथा महिला–परुषों के कार्य ऐसे होते हैं जो यौन भिन्नता के कारण उत्पन्न होते हैं और ऐसे अन्तर प्रायः सभी समाजों और संस्कृतियों में देखे जा सकते हैं। जैसे, जनजाति समाजों. महिलाओं की अपेक्षा पुरुष अधिक शिकार करते हैं। ठीक उसी प्रकार से, पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं का घरेलू कार्य अधिक करना पड़ता है। स्वाभाविक अन्तरों के सिद्धान्त इसी प्रकार की आवश्यकताओं तथा इससे उत्पन्न होने वाले व्यवहारों के साथ जुड़े हुए हैं। अधिकांश सांस्कृतिक समाजों में महिलाएं अपने जीवन का बहुत बड़ा हिस्सा बच्चों के लालन–पालन में लगाती हैं। यौन तथा जेन्डर के बीच अन्तर समझने के लिए समाजीकरण की प्रक्रिया को समझना भी जरूरी है। जैसे परिवारों में महिलाओं तथा पुरुषों का समाजीकरण कैसे होता है? और जनसंचार के साधन इस समाजीकरण किस प्रकार सहायता करते हैं? महिलाओं के समाजीकरण के सिद्धान्तों में स्त्रीत्व तथा पुरूषत्व की भूमिकाओं तथा उनके प्रकार्यों पर समाजीकरण का विशेष ध्यान रहता है। लेकिन स्त्रीत्व तथा पुरूषत्व निर्माण में केवल परिवार तथा जनसंचार के साधनों का ही योगदान नहीं है, अन्य एजेंसियां भी है जो इस प्रकार के समाजीकरण का कार्य करती हैं।

मानवशास्त्री मरडॉक (1949:122) ने जैविक तत्त्व और व्यावहारिकता को एक साथ जोड़ा है। उनके अनुसार महिला या पुरुष को जन्म के पूर्व से निर्धारित तत्त्वों के अनुसार अपनी भूमिका निभाने की बजाय जैविक भिन्नता जैसे पुरुष में ज्यादा शारीरिक ताकत होती है और महिलाएं बच्चे पैदा करती है–की वजह से व्यावहारिकता के लिए लिंगगत भूमिकाएं निभानी हैं अर्थात् ज्यादा दक्षता के लिए लैंगिक श्रम विभाजन आवश्यक है। इस विचार से मिलता–जुलता विचार समाजशास्त्री टालकट पारसन्स (1957:148) का है जिनके अनुसार अमेरीकी परिवार की दो मुख्य विशेषताएं सभी समाजों में पाई जाता हैं। पहली, बच्चों का प्राथमिक समाजीकरण, दूसरी, समाज के प्रौढ़ व्यक्तियों का स्थायीकर। समाजीकरण को प्रभावी बनाने के लिए घनिष्ठ, गर्मजोशी एवं सहारा देने वाले समूह जरूरत होती है। मरडाक और पारसन्स दोनों ने परिवार को आदर्शीकृत किया है, जहां बच्चे अच्छी तरह समायोजित होते हैं और पति–पत्नी एक–दूसरे की जरूरतों का पूरा ख्याल रखते हैं, किन्तु व्यवहार म एस होता।

पारसन्स (1951) के विचारों को काटती हुई ओकले कहती हैं कि उनके विचार पश्चिमी सभ्यता के पिता के मिथक और परिवार व विवाह की पवित्रता पर आधारित है। वे मानती हैं कि गृहणी–मां की भूमिका परिवार नामक इकाई के लिए जरूरी नहीं है, बल्कि पारसन्स लिंगपरक भूमिका की व्याख्या 'महिलाओं के घरेलू अत्याचार' को वैधानिक करार करने वाला मिथक मात्र है। इस प्रकार उनके अनुसार मात्र प्रजनन के अलावा ऐसा कोई काम नहीं है जो सिर्फ महिलाएं कर सकती है या जो महिलाएं नहीं कर सकती हैं । मातृभूमिका सिर्फ सांस्कृतिक रचना है, जैविक नहीं।

महिला असमानता के संदर्भ में समाजशास्त्रियों ने कई प्रकार की परिस्थितियों का उल्लेख किया है। यह बात पहले ही कही जा चुकी है कि स्वयं यौन विभाजन कई प्रकार की कार्य प्रणालियों तथा पहचान के आधार प्रस्तुत करता है। यह मिथक प्रायः सभी समाजों में प्रचलित है कि शारीरिक तथा शक्ति दृष्टि से महिलाएं पुरुषों की अपेक्षा कमजोर हैं और वे किसी शारीरिक दृष्टि से भारी–भरकम काम करने में असमर्थ है। यह भी भ्रम है कि महिलाओं में पुरुषों की अपेक्षा कम बुद्धि होती है। कार्यों सकन की क्षमता का यह विभाजन उनकी अपनी शारीरिक बनावटों के आधार पर ही मिथक के रूप में हमो सामने आया है। ठीक उसी प्रकार से कार्यों के विभाजन की दृष्टि से यह माना जाता है कि महिलाओं का काम घरेलू सेवाओं और पुरुष का काम परिवार तथा परिवार के सदस्यों के लिए भरण–पोषण करना है । यह बंटवारा भी महिला और पुरुष की शारीरिक बनावटों पर आधारित है।

समाजशास्त्रीयों ने महिलाओं और पुरुषों के बीच की असमानता को प्रस्थिति, शक्ति तथा प्रतिष्ठा के आधार पर निर्धारित करने की करने की चेष्टा की है। समूहों, समाजों, और अन्य सामूहिकताओं में महिलाओं और पुरूषों के बीच असमानता के कई आधार ढूंढे जा सकते हैं, जैसे :–

1ण क्या मूल्यवान सामाजिक स्रोतों–उदाहरण के लिए खाद्य, धन, शक्ति और समय में दोनों की पहुंच है?

2ण महिलाओं और पुरुषों के लिए समान जीवन, सामाजिक समानता का विकल्प है?

3ण महिलाओं और पुरुषों की भूमिकाओं और गतिविधियों का समान मूल्य है?

इन प्रश्नों से मिलने वाले उत्तरों के स्वरूप अलग–अलग समाजों में अलग–अलग संस्कृतियों और महिलाओं तथा पुरूषों की समाज संरचना में अलग–अलग हो सकते हैं। मानवशास्त्रियों ने इस दृष्टि से जनजाति समाजों में दो प्रकार की संरचना निर्माण का उल्लेख किया है – 1. मातृसत्तात्मक, मातृस्थानीय, मातृवंशीय आधार पर संरचित होने वाला समाज और 2. पितृसत्तात्मक, पितृस्थानीय तथा पितृवंशीय संरचित समाज। दोनों प्रकार के समाजों में एक तरफ महिलाओं का आधिकार है तो दूसरी संरचना में पुरुषों का। एक समाज में महिला मूल्यों को प्रधानता दी जाती है तो दूसरी संरचना में पुरूषों को, लेकिन आधुनिक युग में यह माना जाता है कि अधिकांश समाज पुरुष सत्ता प्रधान समाज है और असमानता के बहुत से परिणाम इसी कारण उभरकर सामने आते हैं। जनजाति समाजों में इस संरचना द्वारा निर्मित असमानता के रूप आधुनिक समाज में निर्मित होने वाले असमानता के रूपों से भिन्न है। इस असमानता के सारे दृष्टिकोणों को कई रूपों में देखा जा सकता है, जैसे प्रतिदिन के जीवन में महिलाओं और पुरुषों के बीच अन्तर से उठने वाले प्रश्न, स्वास्थ्य की अवस्थाओं तथा वृद्धावस्था में उत्पन्न होने वाला व्यवहार, स्त्रियों के प्रति होने वाले अपराध और उससे उत्पन्न होने वाली हीन भावना, वर्ग संरचना में महिलाओं के उभरते तथा कार्यशील महिलाओं की परिस्थितियां, महिला शिक्षा से उभरने वाले परिणाम और धर्म के परिप्रेक्ष्य में महिलाओं की प्रस्थितियां, ये सभी प्रश्न महिलाओं और उनके बीच के प्रश्न हैं तथा पितृसत्तात्मक समाज की संरचना में महिलाओं की प्रस्थिति के साथ जुड़े हुए हैं। कहना होगा कि महिलाओं संबंधी ये सभी प्रश्न बहुत समय पहले उठे हुए प्रश्न नहीं हैं। आधुनिक समाज में महिलाओं से संबंधित ये प्रश्न बिना विवाह के परिवार, वेश्यावृत्ति, समलैंगिक यौन व्यवहार इत्यादि इसी प्रकार के अन्य प्रश्नों के साथ भी जुड़े हुए हैं। धीरे–धीरे पुरूषत्व में भी परिवर्तन आ रहा है और इसी कारण महिलाओं से संबंधित धारणाओं और दृष्टिकोणों में भी परिवर्तित हो रहे हैं।

जाति और महिलाएं

यह कहा जा सकता है कि अब तक के संस्तरणों की व्याख्या महिलाओं और पुरुषों के बीच असमानता के प्रति लगभग दृष्टिहीन सी रही है। जो कुछ भी संस्तरणों के लिए लिखा गया उसने महिलाओं के संबंध में कोई विचार नहीं दिए गए हैं। शक्ति, सम्पत्ति, प्रतिष्ठा के आधार पर संस्तरण को समझाने वालों ने इस प्रकार से रचनाएं लिखीं जैसे महिलाओं का कोई अस्तित्व ही नहीं है। इन रचना में पुरुष इन संस्तरणों की व्याख्या में सर्वाधिक हिस्सेदार हैं। शक्ति, सम्पत्ति और प्रतिष्ठा में पुरुष के पास ही सबसे अधिक सत्ता व सम्पत्ति और प्रतिष्ठा है। यद्यपि आधुनिक समाजों में संस्तरणा तथा संबंधित महिलाओं और पुरुषों के संबंध में प्रश्न बड़े सीधे हैं पर उनके अध्ययन की दृष्टियां बहुत कठिन हैं। समस्या सबसे बड़ी यह भी है कि धन, सम्पत्ति और प्रतिष्ठा के आधार पर बनने वाले असमान संस्तरण महिलाओं और पुरुषों की असमानता के संदर्भो से नए हैं। यह अन्तर तब भी मौजूद था जबकि लोग जंगल में फल एकत्र करते थे और शिकार करते थे।

भारतीय समाज के इतिहास में सामाजिक–सांस्कृतिक विरोधाभासों और द्विअर्थीय व्यवस्थाओं का एक भाग महिलाओं पर भी स्थापित है। इसीलिए भारतीय महिलाओं के आचरण और उनकी सामाजिक–सांस्कृतिक छवि भी बंटी हुई है। जो लोग महिलाओं के गुणों के समर्थक हैं, वे उन्हें विदूषी तथा पूजा योग्य मानते हैं, लेकिन जो लोग महिलाओं के आचरण संबंधी संदर्भो को निम्न स्थिति में देखते हैं, वे इन संबोधनों से अलग हैं। इस प्रकार महिलाओं की प्रस्थिति के संदर्भ में भारतीय समाज में दोहरे मूल्य हैं। महिलाओं के प्रति दोहरी छवि का होना अपने आप में उनकी निम्न प्रस्थिति का परिचायक है। सामान्यतः किसी जाति पर विचार ना करें फिर भी सामाजिक तथा आर्थिक आधार पर महिलाओं को पराधीनता के रूप में स्वीकार किया जाता है। खासी जनजाति में यह कहावत है कि युद्ध और राजनीति पुरुषों के लिए है जबकि सम्पत्ति एवं बच्चे महिलाओं के लिए। ऐसा ही कुछ आधार केरल के नायरों में भी है, लेकिन जब हम जाति व्यवस्था के संदर्भो में बात करते हैं तो चित्र बदल जाता है। हिन्दू समाज की वैचारिकी में महिला का चरित्र सीता जैसा होना चाहिए, वह पति परमेश्वर के अधीन है, उसे दूसरे पुरुषों की तरफ ध्यान ही नहीं देना चाहिए।

इन सारे तथ्यों का संबंध उन भारतीय मूल्यों से भी है जो समाज में विद्यमान हैं। यह कहा जाता है कि भारतीय महिलाओं के लिए दुःख और आपदा में अन्तर करना कठिन है। धार्मिक आधार पर कर्म और फल की अवधारणा भी महिलाओं को एक विशिष्ट परिस्थिति में पहुंचा देती है। ऐसा भी कहा जाता है कि महिलाओं के ये संबंध संयुक्त परिवार, पितृसत्तात्मक परिवार, वैवाहिक संबंध और जातियों द्वारा स्थापित प्रतिबंधों से बंधे हुए हैं। जाति की व्यवस्थाओं से हटकर महिला की पहचान अपने आप में महत्वपूर्ण है, क्योंकि जातियों का संबंध, ड्यूमो (1966) के अनुसार धर्म की वैचारिकी के आधार के साथ भी जुड़ा हुआ है, पारस्पारिक दृष्टि से महिलाओं की प्रस्थिति का संबंध जातिगत होते हए भी कतिपय उन मान्यताओं के साथ जुड़ा हुआ है, जो धार्मिक व्याख्याओं में देखी जा सकती हैं। यदि हिन्दू महिलाओं के आधारों की सम्पूर्ण व्याख्या की जाए तो हिन्दू धार्मिक ग्रन्थों में महिलाओं को पत्नी, माता, गृहिणी तथा आर्थिक एवं धार्मिक का पूर्ति और परम्पराओं के पोषण के रूप में भी स्वीकारा गया है।

धार्मिक मूल्यों के संदर्भो में कई बातें जुड गई है जो उनकी हीनता का परिचायक है। जैसे यह कहा गया है कि भारतीय समाज की संरचना में महिलाओं पर संवाद नियंत्रण तथा उनकी परिस्थितियों पर चुप रहने की बाध्यता अधिक है। अपेक्षा की जाती है वे पुरुषों के विरूद्ध अपनी वाणी पर नियंत्रण रखेगी और चुप रहने के लिए बध्य होगी।

महिलाओं के संबंध में अब नई व्याख्याएं हमारे सामने आई हैं। इन व्याख्याओं का संबंध कुछ ऐसे सूचकांकों से है, जो मानव विकास में महिलाओं के पिछड़े हुए स्थान को दर्शाते हैं। ये सूचकांक उन संदर्भो के भी प्रतीक हैं जो यद्यपि जातिगत व्यवस्थाओं से परे हैं, पर फिर भी जातियों में महिलाओं में हो रहे परिवर्तनों को नाप सकते हैं। जैसे– शिक्षा के संदर्भ में सम्पूर्ण भारत की जानकारी यह बताती है कि महिला शिक्षा का बहुत निम्न स्थान है। मानव विकास रिपोर्ट में भारत में महिलाओं की प्रस्थिति के संबंध में ऐसी ही जानकारियां दी गई हैं। रिपोर्ट के अनुसार गर्भवती महिलाओं की मृत्युदर अधिक है, बहुत बड़ी समस्या महिलाओं के कुपोषण की है, साक्षरता दर बहुत नीची है और लड़कियो का भ्रुण हत्याएं अधिक हैं। भारत में प्रकाशित अपराध संबंधी आंकड़े यह बताते हैं कि महिला के विरूद्ध अपराधों में वृद्धि हो रही है तथा दहेज हत्याओं, बलात्कार तथा ऐसे ही अपराधों में वृद्धि हुई है। घरेलु हिंसा का सबसे बड़ा भार महिलाओं के ऊपर है। विधवाओं की स्थिति पर सामाजिक चिन्ता बढ़ी है सभी तथ्य महिलाओं की वर्तमान प्रस्थिति के संदर्भो के परिचायक हैं। विभिन्न जाति समूहों में महिलाओं की मानसिकता के संदर्भ भी अलग–अलग हैं और इन मान्यताओं के आधार पर महिलाओं की प्रस्थितियों में भी व्यापक अन्तर आ जाता है।

उपर्युक्त व्याख्याओं से स्पष्ट है कि भारत में महिलाओं की प्रस्थिति पर एक साधारण कथन नहीं। जाति संरचना के विविध सोपानों के अपने सामाजिक स्थान और महिलाओं के प्रति उनके अपने मूल्य तथा मानकों को परीक्षित करना भी आवश्यक है। जाति के सारे संदर्भ संभवतः हमें उन आधारों को प्रस्तुत करने में सहायता देंगे, जो महिलाओं की प्रस्थिति को जातिगत आधारो पर समझने के लिए सहायक हैं।

महिलाओं की प्रस्थिति से संबंधित साहित्य कई संदर्भो में बंटा हुआ है। अधिकांशतः पुस्तकें महिलावाद, महिलाओं की प्रस्थिति की ऐतिहासिक विवेचना और महिलाओं की प्रस्थिति को प्रभावित करने वाले कारकों के अध्ययन के संबंध में हैं। महिला प्रस्थिति और धर्म के संबंधों के भी अध्ययन प्रकाशित हुए हैं। महिलाओं के विरुद्ध अपराध और घरों में महिलाओं के प्रति हिंसा अध्ययनों में उभारा गया है। सैद्धान्तिक स्तर पर समाजशास्त्र के नवीन दृष्टिकोणों में महिलाओं की असमानता पर बहुत कुछ लिखा गया है। विदेशी पुस्तकों में महिलावादी अध्ययन के लिए एक विशेष विषय रहा है। विशेष रूप से उत्तर–आधुनिकता में महिलावाद के अनेक स्वरूप हो सकते हैं, उसका समाजशास्त्र और साहित्य में विस्तृत वर्णन हुआ है। वैश्वीकरण के संदर्भ में महिलाओं की प्रस्थिति कैसे प्रभावित हुई है, इसकी चर्चा भी व्यापक रूप से की गई है। इसी साहित्य में स्वयं में उसकी क्या भूमिका है, यह प्रश्न महत्वपूर्ण है, कैसे वह जाति समूह के नियमों से बंधी हुई है और कैसे जाति महिला संबंधों में लोच पैदा करती है।

विभिन्न सामाजिक तथा राजनीतिक संस्थाओं में महिलाओं की भूमिकाओं का भी उल्लेख हआ है। विशेष रूप से पंचायतीराज में महिलाओं की भूमिकाओं का अध्ययन किया गया है। यह कहा गया है कि यद्यपि राजनीति में तथा राजनीतिक संस्थाओं में महिलाओं को भागीदारी मिली है लेकिन उससे सशक्तीकरण की प्रक्रिया को अधिक बल नहीं मिला है। जहां तक जाति संरचना में महिलाओं की का देखने का प्रश्न है, बहुत कम अध्ययन इस क्षेत्र में किए गए

हैं। इस क्षेत्र में दो प्रकार के अध्ययन विशेष रूप से किए गए हैं – पहले प्रकार के अध्ययन वे हैं जिसका संबंध जाति व्यवस्था में सम्प्रभुता की दृष्टि से महिलाओं की स्थिति का अध्ययन करना है। लीला दुबे (1996) के अध्ययनों की कुछ रचनाएं जाति और महिलाओं की प्रस्थिति के संदर्भ में हैं। दुबे ने जाति संरचना में महिलाओं की प्रस्थिति के विभिन्न पक्षों को देखने का प्रयास किया है। इसी प्रकार के कुछ संदर्भ श्यामाचरण दुबे 190, एम.एन. श्रीनिवास, आन्द्रे बेते और ड्यमो की रचनाओं में भी देखने को मिलते है। लेकिन इन सारे अध्ययनों में निष्कर्ष बिखरे हए हैं जिसके कारण एक क्रमबद्ध निष्कर्षों की भूमिका देना संभव नहीं है। इधर कुछ समय से दलित महिलाओं के संबंध में भी बहुत कुछ लिखा गया है। प्रस्तुत अध्ययन जातिगत आधारों में महिलाओं की प्रस्थिति के आंकने का अध्ययन है जिसका संदर्भ विशेष रूप से राजस्थान जैसे सामंतवादी समाज की पृष्ठभूमि के साथ जुड़ा हुआ है। इस प्रकार के अध्ययन महत्वपूर्ण ही नहीं अपितु आवश्यक भी है।

References

1. Dube, Leela. 1996. "Caste and Women" in Caste its Twentieth Century Avatar (Ed.) Srinivas, M. N. New Delhi: Penguin Books India.
2. Dube, S.C. 1990. Indian Society. New Delhi: National Book Trust.
3. Murdock, J. P. 1949. Social Structure, New York: McMilan.
4. Parsons, T.1951. The Social System, New York: Free Press.
5. Dumon, L.1966. Homo Heraricus: Cast System and its Implication.
6. Angels, F. 1804. The origion of Family, Private Property and the State, Mascow: Progress Publishers.
7. Tumin M. 1969. Social Stratification, New Delhi: Prentice Hall,
8. Okley, N. 1974. Housewife, London: Alen Len.
9. गुप्ता, शर्मा : भारतीय समाज, साहित्य भवन, आगरा।